'कौल-कल्पतरु'

गण्डी

वर्ष ४७] पौष २०४५ वि०—जनवरी १९८९ [संख्या १०

भगवती गङ्गा-यमुना-सरस्वती

पूजा अङ्क

सामान्य वार्षिक मूल्य ४५-०० रु० : : यह प्रति

मूल्य १०/-

सन् १९४२ ई० से प्रकाशित

हिन्दू-धर्म के क्रियात्मक पक्ष को राष्ट्र-भाषा में प्रस्तुत करनेवाली

एक-मात्र मासिक पत्रिका

कौल-कल्पतरु चण्डी

वर्ष ४७ : पौष २०४५ वि०—जनवरी १९८९ : संख्या १०

सम्पादकीय

१—भगवती गंगा की भोग व मोक्ष-दायिनी स्तुतियाँ ... ५

पाठ-विधि ५
१. पद्म-पुराणोक्त श्री गङ्गा-स्तुति ६
२. आद्य शङ्कराचार्य विरचित श्री गङ्गाष्टकम् ८
आद्य शङ्कराचार्य विरचित श्री गङ्गाष्टक का हिन्दी-रूपान्तर ९
३. श्री गङ्गा-स्तुति १०
श्री गङ्गा-स्तुति का हिन्दी-रूपान्तर ११
४. स्कन्द-पुराणोक्त श्री गङ्गा-स्तोत्रम् १२
स्कन्द-पुराणोक्त श्रीगङ्गा-स्तोत्र का हिन्दी-रूपान्तर १३
५. महान् संत तुलसीदास द्वारा रचित सिद्ध स्तोत्र १४

२—महर्षि वेद-व्यास द्वारा वर्णित प्राचीन श्री गङ्गा-माहात्म्य-कथा ... १५
हिन्दी श्रीगङ्गा-माहात्म्य-कथा १९

३—भगवती यमुना की आनन्द-दायिनी स्तुति ... २१
पाठ-विधि २१
१. स्कन्द-पुराणोक्त यमुना-स्तुति २१
२. श्रीमद्-वल्लभाचार्य विरचित श्री युमनाष्टक-स्तोत्रम् २२
हिन्दी यमुनाष्टक-स्तोत्र २३

४— गङ्गा जी का माहात्म्य, तीर्थ-यात्रा से क्या लाभ होता है ? ... २४

५—भगवती गङ्गा की मन्त्र-साधना ... २५

६—भगवती सरस्वती की पूजा ... २८

'चण्डी'
वर्ष ४७

सम्पादकीय

पौष २०४५ वि०
जनवरी ८९

शक्ति-उपासना का महत्त्व

'शक्ति-उपासना' सभी मनुष्यों के लिये हितकारी है। बिना शक्ति के जीव पलक तक नहीं मार सकता। अतः शक्ति का अवलम्बन अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्यों के लिये तो मनुष्यत्व और देवत्व को प्राप्ति के लिये गुणों की अधिष्ठात्री 'शक्ति' का आवाहन और उनकी विधि-वत् उपासना ही एकमात्र उपाय है।

गुणों की अधिष्ठात्री 'शक्ति' का स्मरण करने से अथवा ध्यान-पूर्वक विचार करने से, अपने में महान् गुणों का समावेश होता है। इसी सिद्धान्त के आधार पर, हिन्दू-धर्म में 'शक्ति-पूजा' की एक अति विस्तृत परम्परा है। इस परम्परा में 'गङ्गा-यमुना-सरस्वती' का अपना विशेष स्थान है।

शक्ति-पूजा की परम्परा में गङ्गा-यमुना-सरस्वती का महत्त्व

हिन्दू धर्म-शास्त्रों में 'गङ्गा-यमुना-सरस्वती' के सम्बन्ध में विशाल साहित्य प्राप्त होता है। इस विशाल साहित्य को देखते हुये, यह बात स्पष्ट रूप में कही जा सकती है कि 'गङ्गा-यमुना-सरस्वती' केवल नदियाँ नहीं हैं। नदी तो इनका स्थूल स्वरूप है। सूक्ष्म-रूप में, ये 'शक्ति' की दिव्य ऊर्मियों के प्रतीक हैं। इनके दर्शन मात्र से अन्तः-करण में, 'शक्ति' की ज्योति की अनुभूति का स्फुरण होने लगता है, जिससे जीवन की दिव्यता, चेतनता और शाश्वत शक्ति का अभीष्ट विकास होता है।

वेदों में 'सरस्वती' का स्पष्ट रूप में व्यापक विवेचन हुआ है। विभिन्न देवताओं के साथ महा-देवी सरस्वती का आवाहन किया गया है, जिससे यह तथ्य प्रतिपादित हो जाता है कि वे ज्ञान की अधिष्ठात्री देवी हैं।

पुराणों में गङ्गा जी के आविर्भाव की ऐसी रहस्यात्मक कथाओं का वर्णन मिलता है, जिनसे सिद्ध होता है कि 'गङ्गाजी' भोग और मोक्ष देनेवाली चैतन्य-स्वरूपा देवी हैं। इसी प्रकार 'यमुना जी' का ऐसा वर्णन मिलता है, जिससे सिद्ध होता है कि वे आनन्द-स्वरूपा देवी हैं।

शक्ति के त्रिविध स्वरूप

यह उल्लेखनीय है कि हिन्दू धर्म-शास्त्रों में प्रत्येक शक्ति के तीन रूपों का वर्णन किया गया है। ये रूप हैं–१ आधि-भौतिक (स्थूल-स्वरूप), २ आधि-दैविक (सूक्ष्म स्वरूप) और ३ आध्यात्मिक (ज्ञान-स्वरूप)।

स्थूल-सूक्ष्म-आध्यात्मिक—इस त्रि-विध वर्णन के पीछे सिद्धान्त यह है कि जहाँ किसी शक्ति का स्थूल स्वरूप है, वहीं उस शक्ति का सूक्ष्म स्वरूप भी है। अथवा जहाँ किसी शक्ति का सूक्ष्म स्वरूप नहीं है, वहाँ उसका स्थूल स्वरूप भी नहीं है।

उपर्युक्त सिद्धान्त से यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि स्थूल स्वरूप से सूक्ष्म स्वरूप की प्राप्ति सम्भव है। साथ ही शक्ति के साक्षात्कार के लिये यही हमारा एक-मात्र मार्ग भी है।

यहाँ यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि, जब स्थूल स्वरूप के साथ सूक्ष्म स्वरूप है, तब हमें स्थूल स्वरूप के साथ ही सूक्ष्म रूप सहज रूप में दिखाई क्यों नहीं देता ? इस प्रश्न के उत्तर में, हमारे ऋषियों का कथन है कि ऐसा 'आवरण' के कारण होता है। हमारी दृष्टि में दोष होने के कारण हमें 'शक्ति' का सूक्ष्म स्वरूप दिखाई नहीं देता और हम भटकते रहते हैं। जब हमारी दृष्टि दोष-मुक्त हो जाती है, तब हमें शक्ति के सूक्ष्म स्वरूप का साक्षात्कार हो जाता है और हम स्वयं शक्ति-मय बन जाते हैं।

हिन्दुओं की पूजा, साधना, व्रत का प्रयोजन

स्थूल दृष्टि को सूक्ष्म की ओर ले जाने के लिये, दृष्टि को दोष-मुक्त करने के लिये ही हमारे ऋषियों द्वारा पूजा, साधना, व्रत आदि का उपदेश हुआ है। पूजा, साधना, व्रत का उद्देश्य शक्ति के सूक्ष्म स्वरूप का साक्षात्कार कराना ही है।

शक्ति के अनन्त स्वरूप हैं। इन अनन्त स्वरूपों में से मानव-समाज के लिये कल्याणकारी स्वरूपों की खोज में हमारे ऋषियों का योग-दान सबसे ऊँचा रहा है। 'गङ्गा-यमुना-सरस्वती' के दिव्य स्वरूप की खोज इस तथ्य का प्रत्यक्ष उदाहरण है। आधुनिक काल में जहाँ एक ओर धर्म की स्वस्थ परम्परायें लुप्त हो गई हैं, तो दूसरी ओर मानव-समाज अपने लक्ष्य से भटक गया है। ऐसी विषम परिस्थिति में 'गङ्गा-यमुना-सरस्वती' का दिव्य स्वरूप भटके हुये मानव-समाज को पुनः नई स्फूर्ति और शक्ति प्रदान कर सकता है, इसमें कोई सन्देह नहीं।

आवश्यकता केवल इस बात की है कि लोग ध्यान-पूर्वक इन दिव्य स्वरूपों को समझने का प्रयत्न करें। श्रद्धा के साथ इनका आवाहन करें। विधि-पूर्वक इनकी पूजा करें, प्रार्थना करें।

भगवती गङ्गा का दिव्य स्वरूप

भगवती गङ्गा को पतित-पावनी, पुण्य-दायिनी कहा गया है क्योंकि शुभ्र-वर्णा भगवती गङ्गा के दर्शन मात्र से 'मन' और 'प्राण' की संकुचित वृत्तियाँ अर्थात् 'पाप की भावनाएँ' नष्ट हो जाती हैं। संकुचित वृत्तियों के समाप्त हो जाने पर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी पुरुषार्थ-चतुष्टय की प्राप्ति होती है। भगवती गङ्गा के चारों हाथों में कलश, कमल, वर और अभय इसी बात के द्योतक हैं।

भगवती गङ्गा का वाहन 'मकर' है। मकर जड़-तत्त्व का सुन्दर उदाहरण हैं। मकर जल में रहता है। हमारा जड़त्व भी रस-रूपी जल के भीतर रहता है। मकर का मुख जल से कुछ ऊपर उठा रहता है, मानों वह जल से ऊपर आने के लिए लालायित है। ठीक इसी प्रकार जब रस-रूपी समुद्र के भीतर स्थित मकर-रूपी हमारा जड़त्व ऊपर उठने के लिए लालायित होता है, तब वह सर्व प्रकार के जड़त्व को दूर करनेवाली पाप-हारिणी गङ्गा देवी का वाहन बन जाता है।

भगवती सरस्वती का दिव्य स्वरूप

भगवती 'सरस्वती' ब्रह्म-विद्या हैं। 'सरस्वती' शब्द का अर्थ है 'गति-शीला'। दूसरे शब्दों में निष्क्रिय ब्रह्म की स्पन्द-शक्ति या क्रिया-शक्ति। सृष्टि की प्रथम गति को 'स्पन्द' कहते हैं। सम्पूर्ण जगत् स्पन्द-मय है। स्पन्द को हमारे यहाँ शब्द कहा गया है। शब्द-मय संसार की सृष्टि हुई है। अतः स्पन्द-शक्ति का बोध करानेवाला 'वीणा-यन्त्र' भगवती सरस्वती के दायें हाथ में है।

बाँयें हाथ में वेद-रूपी पुस्तक है, जो ज्ञान की बोधक है। इस प्रकार 'नाद' एवं 'ज्ञान'—इन दोनों की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती हैं। इसीलिए सरस्वती-पूजा के समय यह कहकर प्रार्थना की जाती है कि 'विश्व-रूप विशाल आँखोंवाली भगवति, सरस्वती देवि ! हमें ज्ञान दो !'

भगवती सरस्वती का वाहन 'हंस' है। यह इस बात का द्योतक है कि भगवती सरस्वती के उपासकों को 'हंस' की भाँति निष्कलङ्क चरित्र अपनाना चाहिए। इसके लिए गुण-दोष को पहचान कर उन्हें गुण को ग्रहण करना होगा।

गङ्गा-यमुना-सरस्वती महा-शक्ति के साक्षात्कार का फल

पतित-पावनी गङ्गा महा-शक्ति के साक्षात्कार से हम पुनः पवित्र हो जायेंगे। आनन्द-स्वरूपा यमुना के साक्षात्कार से हम आनन्द-मय बन सकें और ज्ञान-रूपा महा-शक्ति सरस्वती के साक्षात्कार से हमारा पर्वत-तुल्य अज्ञान सदा के लिये समाप्त हो जायेगा।

इसी दृष्टिकोण से 'महा-कुम्भ', प्रयाग २०४५ वि० (सन् १९८९ ई०) के पुनीत अवसर पर 'चण्डी' मासिक पत्रिका के प्रस्तुत पौषाङ्क द्वारा, संक्षेप में, भगवती 'गङ्गा-यमुना-सरस्वती' पूजा-अङ्क प्रकाशित किया जा रहा है। इसमें विषयों का चयन इस प्रकार किया गया है कि सभी बन्धु, चाहे वे संस्कृत जानते हों या नहीं, लाभ उठा सकें। यथा-सम्भव शीघ्र ही भगवती 'गङ्गा-यमुना-सरस्वती' सम्बन्धी अन्य दुर्लभ साधनोपयोगी साहित्य भी प्रकाशित किया जायेगा, जिसमें अनादि-अनन्त परम पावन 'अक्षय-वट' का भी रहस्योद्घाटन किया जायगा। यह 'अक्षय-वट' प्रागैतिहासिक काल से 'गङ्गा-यसुना-सरस्वती' के 'त्रिवेणी-सङ्गम' से सदैव अभिन्न रहा है और तीर्थ-राज प्रयाग का वह गौरव-स्वरूप है। उसके दर्शन-पूजन के बिना प्रयाग-राज की तीर्थ-यात्रा अधूरी ही रहती है।

हिन्दू-धर्म के ज्ञान-मय क्रियात्मक स्वरूप

को समझने के लिये

आज ही 'चण्डी' मासिक पत्रिका के सदस्य बनें !

॥ श्रीगंगायै नमः ॥

भगवती गंगा

की

भोग व मोक्ष-दायिनी स्तुतियाँ

पाठ-विधि

दोनों हाथ जोड़कर, 'प्रणाम-मुद्रा' में गङ्गा-जल में खड़े होकर पूर्ण श्रद्धा के साथ निम्न-लिखित स्तुतियों से किसी एक स्तुति का पाठ कर गङ्गा-जल में तीन या पाँच डुबकी लगाये।

अथवा इन स्तुतियों की मूल-भावना का सतत स्मरण करते हुये गङ्गा-जल में तीन या पाँच डुबकी लगाये।

अथवा गङ्गा नदी से बाहर, गङ्गा-जल से तीन बार आचमन करे। यथा—

स्नान आदि करके कर्त्ता शुद्ध स्थान में पूर्व या उत्तर की ओर मुँह करके बैठे। तब पंच - पात्र द्वारा दाहिने हाथ में गङ्गा-जल लेकर निम्न-लिखित मन्त्र पढ़ते हुये जल अपने ऊपर छिड़के। यथा—

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

इसके बाद पंच-पात्र से पुनः जल लेकर तीन बार आचमन करे। यथा—

१ ॐ आत्म-तत्त्वं शोधयामि स्वाहा।
२ ॐ विद्या-तत्त्वं शोधयामि स्वाहा।
३ ॐ शिव-तत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

इसके पश्चात् दोनों हाथों को गङ्गा-जल से स्वच्छ करे। भगवती गङ्गा का ध्यान करे।

फिर दोनों हाथ जोड़कर 'पद्मासन' या सुखासन में बैठकर पूर्ण श्रद्धा के साथ निम्न-लिखित स्तुतियों में से किसी एक स्तुति का पाठ करे।

स्तुति-पाठ करने के बाद अन्त में 'गङ्गा-जल' को अपने मस्तक पर लगावे।

(१)

॥ पद्म-पुराणोक्त श्रीगंगा-स्तुतिः ॥

यत्-संस्मृतिः सपदि कृन्तति दुष्कृतौघं,
पापावलीं जयति योजन - लक्षतोऽपि ।
यन्नाम नाम जगदुच्चरितं पुनाति,
दिष्टचा हि सा पथि दृशोर्भविताद्य गङ्गा ॥१

जिनकी स्मृति पाप-राशि का तत्काल नाश कर देती है, जो लाख योजन दूर से भी पापों के समूह को परास्त करती हैं, जिनका नाम उच्चारण किये जाने पर सम्पूर्ण जगत् पवित्र हो जाता है, वह गङ्गा जी सौभाग्य-वश आज मेरे दृष्टि-पथ में आयी हैं ।

आलोकोत्कण्ठिते प्रमुदित-मनसा वर्त्म यस्याः प्रयातम्,
सद् यस्मिन् कृत्यमेतामथ प्रथम-कृती जज्ञिवान् स्वर्ग-सिन्धुम् ।
स्नानं सन्ध्या निवापः सुर-यजनमपि श्राद्ध-विप्राशनाद्यम्,
सर्वं सम्पूर्णमेतद् भवति भगवतः प्रीतिदं नात्र चित्रम् ॥२

जिनके दर्शन के लिये मनुष्य उत्कण्ठित एवं प्रसन्न-चित्त होकर प्रयत्न करता है, जिनके तट पर समस्त शास्त्रोक्त कर्म सम्पन्न होते हैं, उन गङ्गा जी को सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा जी ने पहले 'स्वर्ग-गङ्गा' के रूप में उत्पन्न किया था । गङ्गा जी के तट पर किया हुआ स्नान, सन्ध्या, तर्पण, देव-पूजा, श्राद्ध और ब्राह्मण-भोजन आदि सब कुछ सब प्रकार से पूर्ण व भगवान् को प्रसन्नता-दायक होता है, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है ।

द्रवी-भूतं परं-ब्रह्म, परमानन्द-दायिनी !
अर्घ्यं गृहाण मे गङ्गे ! पापं हर नमोऽस्तु ते ॥
॥ श्रीगङ्गा-देव्यै अर्घ्यं समर्पयामि ॥

परमानन्द प्रदान करनेवाली गङ्गा जी ! आप जल-रूप में अवतीर्ण साक्षात् पर-ब्रह्म हैं । आपको नमस्कार । मेरा दिया अर्घ्य ग्रहण कीजिये और मेरा पाप हर लीजिये ।

॥ मैं श्री गङ्गा जी को अर्घ्य देता हूँ—यह कहकर गङ्गा जी को जल प्रदान करे ॥

साक्षाद्-धर्म-द्रवौघं मुर-रिपु-चरणाम्भोज-पीयूष-सारम्,
दुःखस्याब्धेस्तरित्रं सुर-दनुज-नुतं स्वर्ग-सोपान-मार्गम् ।
सर्वाहो-हारि वारि प्रवर-गुण-गणं भासि या संवहन्ती,
तस्यै भागीरथि ! श्रीमति ! मुदित-मना देवि ! कुर्वे नमस्ते ॥३
॥ श्रीगङ्गा-देव्यै नमस्कारं करोमि ॥

जो जल-रूप में साक्षात् धर्म हैं, जो भगवान् विष्णु के चरण-कमलों से प्रकट हुई सुधा का सार हैं, जो दुःख-रूपी समुद्र से पार होने के लिये जहाज समान हैं, जिन्हें देवता

और दानव प्रणाम करते हैं, जो स्वर्ग-लोक में जाने के लिये सीढ़ी-स्वरूपा हैं, जो समस्त पापों का संहार करनेवाली हैं, जो उत्तम गुणों से युक्त, शोभा-सम्पन्ना हैं—ऐसी हे भागीरथि देवि गङ्गा जी ! आपको मैं प्रसन्न-चित्त होकर नमस्कार करता हूँ ।

स्वः - सिन्धो ! दुरिताब्धि - मग्न - जनता - संतारणि !
प्रोल्लसत्-कल्लोलामल-कान्ति-नाशित-तमस्तोमे जगत्पावनि !
गङ्गे देवि ! पुनीहि दुष्कृत-भय-क्रान्तं कृपा-भाजनं,
मातर्मां शरणागतं शरणदे रक्षाद्य भो ! भीषितम् ॥४

स्वर्ग-लोक की नदी भगवति गंगे ! आप पाप के समुद्र में डूबी हुई जनता को तारनेवाली हैं, अपनी उठती हुई शोभा-युक्त लहरों की निर्मल कान्ति से पाप-रूपी अन्धकार-राशि का नाश करती हैं तथा जगत् को पवित्र करनेवाली हैं । मैं पाप के भय से ग्रस्त हूँ और आपका कृपा-भाजन हूँ । हे शरण-दायिनि माता ! मैं आपकी शरण में आया हूँ, आप मुझ भय-भीत की रक्षा कीजिये ।

हं हो मानस ! कम्पसे किमु सखे ! त्रस्तो भयान्नारकात् ?
किं ते भीतिरिति श्रुतिर्दुरित - कृत् संजायते नारकी ।
मा भैषीः शृणु मे गतिं यदि मया पापाचल-स्पर्धिनी प्राप्ता ।
ते निरयः कथं किमपरं किं मे न धर्मो धनम् ॥५

हे मेरे चित्त ! ओ मेरे मित्र ! तुम नरक के भय से त्रस्त होकर काँप क्यों रहे हो ? क्या तुम यह सोचकर भयभीत हो रहे हो कि पापी मनुष्य नरक जाता है—ऐसा श्रुति का वचन है ? हे मित्र ! इसके लिये भय न करो । मेरी क्या गति होगी—यह बताता हूँ । सुनो, मुझे पापों के पहाड़ से टक्कर लेनेवाली भगवती गङ्गा प्राप्त हो गयी हैं । मुझे नरक की प्राप्ति कैसे हो सकती है ? अथवा दूसरी कोई दुर्गति क्यों होगी ? क्या मेरे पास धर्म-रूपी धन नहीं है ?

स्वर्वासाधि-प्रशंसा-मुदमनुभवितुं मज्जनं यत्र चोक्तम्,
स्वर्नार्यो वीक्ष्य हृष्टा विबुध-सुरपति - प्राप्ति - संभावनेन ।
नीरे श्रीजह्नु-कन्ये ! यम-नियम-रताः स्नान्ति ये तावकीने,
देवत्वं ते लभन्ते स्फुटमशुभ-कृतोऽप्यत्र वेदाः प्रमाणम् ॥६

गङ्गा जी के जल में किया हुआ स्नान स्वर्ग-लोक के निवास तथा प्रशंसा के आनन्द की अनुभूति का कारण बताया गया है। वहाँ किसी को स्नान करता देखकर स्वर्ग-लोक की देवियाँ एक नूतन देव-राज के मिलने की सम्भावना से बहुत प्रसन्न होती हैं । हे जह्नु-पुत्रि गंगे ! जो लोग यम-नियमों का पालन करते हुये आपके जल में स्नान करते हैं, वे पहले के पापी होने पर भी निश्चय ही देवत्व प्राप्त कर लेते हैं—ऐसा वेद-प्रमाण है ।

(२)

आद्य शङ्कराचार्य विरचित

।। श्रीगंगाष्टकम् ।।

भगवति ! तव तीरे नीर - मात्राशनोऽहं, विगत - विषय - तृष्णः कृष्णमाराधयामि ।
सकल-कलुष-भङ्गे, स्वर्ग-सोपान-सङ्गे, तरल-तर-तरङ्गे, देवि, गङ्गे ! प्रसीद ।।१

भगवति ! भव-लीला-मौलि-माले ! तवाम्भः, कणमणु-परिमाणं प्राणिनो ये स्पृशन्ति ।
अमर-नगर-नारी-चामर-ग्राहिणीनां, विगत-कलि-कलङ्कातङ्कमङ्के लुठन्ति ।।२

ब्रह्माण्डं खण्डयन्ती हर - शिरसि जटा - वल्लिमुल्लासयन्ती,
स्वर्लोकादापतन्ती कनक-गिरि-गुहा-गण्ड-शैलात् स्खलन्ती ।
क्षोणी-पृष्ठे लुठन्ती दुरित-चय-चमूर्निर्भरं भर्त्सयन्ती,
पाथोधिं पूरयन्तो सुर-नगर-सरित् पावनी नः पुनातु ।।३

मज्जन् मातङ्ग-कुम्भ-च्युत-मद-मदिरामोद-मत्तालि-जालम्,
स्नानैः सिद्धाङ्गनानां कुच-युग-विगलत् कुंकुमासङ्ग-पिङ्गम् ।
सायं-प्रातर्मुनीनां कुश-कुसुस-चयैश्छन्न-तीरस्थ-नीरम्,
पायान्नो गाङ्गमम्भः करि-कलभ-करा-क्रान्त-रंहस्तरङ्गम् ।।४

आदावादि - पितामहस्य नियम - व्यापार - पात्रे जलं,
पश्चात् पन्नग-शायिनो भगवतः पादोदकं पावनम् ।
भूयः शम्भु - जटा - विभूषण - मणिर्जह्नोर्महर्षेरियं,
कन्या कल्मष - नाशिनी भगवती भागीरथी पातु माम् ।।५

शैलेन्द्रादवतारिणी निज - जले मज्जज्जनोत्तारिणी,
पारावार-विहारिणी भव - भय - श्रेणी - समुत्सारिणी ।
शेषाहेरनुकारिणी हर - शिरो - वल्लीदलाकारिणी,
काशी-प्रान्त - विहारिणी विजयते गङ्गा मनो - हारिणी ।।६

कुतो वीचिर्वीचिस्तव यदि गता लोचन - पथं,
त्वमापीता पीताम्बर - पुर - निवासं वितरसि ।
त्वदुत्सङ्गे गङ्गे ! पतति यदि कायस्तनु - भृतां,
तदा मातः ! शातक्रतव - पद - लाभोऽप्यति - लघुः ।।७

गङ्गे ! त्रैलोक्य-सारे, सकल-सुर-वधू-धौत-विस्तीर्ण-तोये,
पूर्ण-ब्रह्म-स्वरूपे ! हरि-चरण-रजो-हारिणी स्वर्ग-मार्गे ।
प्रायश्चित्तं यदि स्यात् तव जल-कणिका ब्रह्म-हत्यादि-पापे
कस्त्वां स्तोतुं समर्थस्त्रि-जगदघ-हरे, देवि, गङ्गे ! प्रसीद ।।८

आद्य शङ्कराचार्य विरचित

श्रीगंगाष्टक

का

हिन्दी-रूपान्तर

हे गंगे देवि ! तुम्हारे तीर पर केवल तुम्हारा जल-पान करता हुआ, विषय-तृष्णा से रहित होकर मैं भगवान् श्रीकृष्ण की आराधना करता हूँ। हे सकल पाप-नाशिनि ! स्वर्ग-सोपान-रूपिणि ! तरल-तर तरंगोंवाली हे देवि गंगे ! मुझ पर प्रसन्न हो।

हे भगवति ! तुम श्रीमहादेव जी के मस्तक की लीला-मयी माला हो। जो प्राणी तुम्हारे जल-कण के अणु-मात्र को भी स्पर्श करते हैं, वे कलि-कलङ्क के भय को त्याग-कर, देव-पुरी की चँवर-धारिणी अप्सराओं की गोद में शयन करते हैं।

ब्रह्माण्ड को फोड़कर निकलनेवाली, महादेव जी की जटा-लता को उल्लसित करती हुई, स्वर्ग-लोक से गिरती हुई, सुमेरु की गुफा और पर्वत-माला से झरती हुई, पृथ्वी पर लोटती हुई, पाप-समूह की सेना की भर्त्सना करती हुई, समुद्र को भरती हुई, देव-पुरी की पवित्र नदी गंगा हमें पवित्र करे।

स्नान करते हुये हाथियों के कुम्भ-स्थल से झरते हुये मद-रूपी मदिरा की गन्ध के कारण मधुप-वृन्द जिससे मतवाले हो रहे हैं, सिद्धों की स्त्रियों के स्तनों से बहे हुए कुंकुम के मिलने से जो पिंगल-वर्ण हो रहा है तथा सायं-प्रातः मुनियों द्वारा अर्पित कुश और पुष्पों के समूहों से जो किनारे पर ढँका हुआ है, जिसकी तरंगों का वेग हाथियों के बच्चों की सूँड़ों से आक्रान्त हो रहा है, वह गंगा-जल हमारा कल्याण करे।

पहले ब्रह्मा के कमण्डलु में जल-रूप से, फिर शेष-शायी भगवान् के पवित्र चरणोदक-रूप से और तदनन्तर महादेव जी की जटा को सुशोभित करनेवाली महर्षि जन्हु जी की कन्या, पाप-नाशिनी, भगवती भागीरथी मेरी रक्षा करें।

हिमालय से उतरनेवाली, अपने जल में गोता लगानेवालों का उद्धार करने-वाली, समुद्र में मिलनेवाली, संसार-संकटों के समूह का नाश करनेवाली, शेषनाग का अनुकरण करनेवाली, शिव जी के मस्तक पर लता के समान सुशोभिता, काशी-क्षेत्र में बहनेवाली, मनो-हारिणी गंगा जी विजयिनी हों। (शेष पृष्ठ १० के नीचे)

(२)

श्रीगंगा - स्तुतिः

विष्णु-पादाब्ज-सम्भूते, गङ्गे, त्रिपथ-गामिनि !
धर्म-द्रवेति विख्याते ! पापं मे हर जाह्नवि ।।१
ॐ विष्णोः पाद-प्रसूताऽसि वैष्णवी विष्णु-पूजिता ।
त्राहि मामेनसस्तस्मादा - जन्म - मरणान्तकात् ।।२
तिस्रः कोटचोऽर्ध-कोटी च तीर्थानां वायुरब्रवीत् ।
दिवि भुव्यन्तरिक्षे च तानि ते सन्ति जाह्नवि ।।३
नमामि गंगे ! तव पाद - पङ्कजं सुरासुरैर्वन्दित-दिव्य-रूपम् ।
भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यं भावानुसारेण सदा नराणाम् ।।४
नन्दिनीत्येव ते नाम देवेषु नलिनीति च ।
वृन्दा पृथ्वी च शुभगा विश्व-काया शिवा सिता ।।५
विद्या-धरी सु-प्रसन्ना तथा लोक-प्रसाधिनी ।
क्षेम्या च जाह्नवी चैव शान्ता शान्ति-प्रदायिनी ।।६

फल-श्रुति

एतानि पुण्य-नामानि स्नान-काले प्रकीर्तयेत् ।
भवेत् सन्निहिता तस्य गङ्गा त्रि-पथ-गामिनी ।।
या गतिर्योग-युक्तानां मुनीनामूर्ध्व-रेतसाम् ।
सा गतिः सर्व-जन्तूनां जाह्नवी-तीर-वासिनाम् ।।

(पृष्ठ ९ का शेषांश)

यदि तुम्हारी तरंग नेत्रों के सामने आ जाय, तो फिर संसार की तरंगें (भौतिक वासनाएँ) कहाँ रह सकती हैं ? तुम अपना जल-पान करने पर वैकुण्ठ-लोक में निवास देती हो । हे गंगे ! यदि जीवों का शरीर तुम्हारी गोद में छूट जाता है, तो मातः ! उसके आगे इन्द्र-पद की प्राप्ति भी अत्यन्त तुच्छ मालूम होती है ।

तीनों लोकों की सार सर्व-देवांगनाएँ जिसमें स्नान करती हैं, ऐसे विस्तृत जलवाली, पूर्ण-ब्रह्म-रूपिणी, स्वर्ग-मार्ग में भगवान् के चरणों की धूलि धोनेवाली, हे गंगे ! जब तुम्हारे जल का एक कण-मात्र ही ब्रह्म-हत्यादि पापों का प्रायश्चित्त है, तो त्रैलोक्य-पाप-नाशिनि ! तुम्हारी स्तुति करने में कौन समर्थ है ? हे देवि गंगे ! आप प्रसन्न हों ।

श्रीगंगा-स्तुति

का

हिन्दी रूपान्तर

भगवान् विष्णु के चरण-कमलों से आविर्भूत होनेवाली, तीनों लोकों में पहुँचनेवाली, धर्म-भावना को प्रवाहित करने में प्रख्यात हे जह्नु-सुता देवि गङ्गे ! मेरे पापों को दूर कर दो ॥१

तुम भगवान् विष्णु के चरणों से उत्पन्न हुई वैष्णवी शक्ति हो, भगवान् विष्णु ने तुम्हारी पूजा की है। अतः जन्म से लेकर मृत्यु तक पापों से मेरी रक्षा करो ॥२

वायुदेव ने बताया कि स्वर्ग में, पृथ्वी पर और अन्तरिक्ष में जो करोड़ों पवित्र तीर्थ-स्थान हैं, वे सब हे जह्नु-सुते गङ्गे ! तुममें विराजमान हैं ॥३

हे गङ्गे ! देवों और दानवों द्वारा नमस्कृत, दिव्य स्वरूपवाले तुम्हारे चरण-कमल को मैं प्रणाम करता हूँ। तुम मनुष्यों को उनकी भक्ति-भावना के अनुसार सदा भोग और मोक्ष प्रदान किया करती हो ॥४

देवताओं में तुम्हारे शुभ नाम नन्दिनी, नलिनी, वृन्दा, पृथ्वी, शुभगा, विश्व-काया, शिवा, सिता, विद्या-धरी, सु-प्रसन्ना, लोक-प्रसाधिनी, क्षेम्या, जाह्नवी, शान्ता और शान्ति-प्रदायिनी प्रसिद्ध हैं ॥ ५-६

फल-श्रुति

स्नान करते समय जो इन पवित्र नामों का कीर्तन करता है, उसके निकट तीनों लोकों में पहुँचने-वाली गङ्गा देवी आकर उपस्थित हो जाती हैं। ब्रह्मचारी और योगाभ्यास करनेवाले मुनियों को जो उत्तम दिशा प्राप्त होती है, वही श्रेष्ठ दिशा गङ्गा जी के तट पर रहनेवाले सभी प्राणियों को सुलभ होती है।

(४)

स्कन्द-पुराणोक्त

श्रीगंगा-स्तोत्रम्

॥ पूर्व-पीठिका ॥

स्कन्द-प्रति ईश्वर उवाच—

अपि दूर-स्थितस्यापि गङ्गा - माहात्म्य - वेदिनः ।
अयोग्यस्यापि गोविन्द ! भक्त्या गङ्गा प्रसीदति ॥१
माहात्म्यं ये च गङ्गायाः शृण्वन्ति च पठन्ति च ।
तेऽप्यशेषैर्महा - पापैर्मुच्यन्ते नात्र संशयः ॥२
उद्धरेन्नरकात् पूर्वान्दश - घोराद् दश-वरान् ।
वक्ष्यमाणमिदं स्तोत्रं गङ्गाऽग्रे श्रद्धया पठेत् ॥ ३

॥ स्तोत्रम् ॥

ॐ नमः शिवायै गङ्गायै शिवदायै नमो नमः, नमस्ते विष्णु-रूपिण्यै ब्रह्म-मूर्त्यै नमोऽस्तु ते ॥१
नमस्ते रुद्र-रूपिण्यै शाङ्कर्यै ते नमो नमः, सर्व-देव-स्वरूपिण्यै नमो भेषज-मूर्त्तये ॥२
सर्वस्य सर्व-व्याधीनां भिषक्-श्रेष्ठ्यै नमोऽस्तु ते, स्थास्नु-जङ्गम-सम्भूत-विष-हन्त्र्यै नमोऽस्तु ते ॥३
संसार-विष-नाशिन्यै जीवनायै नमोऽस्तु ते, ताप-त्रितय-संहन्त्र्यै प्राणेश्यै ते नमो नमः ॥४
शान्ति-सन्तान-कारिण्यै नमस्ते शुद्ध-मूर्त्तये, सर्व-संशुद्धि-कारिण्यै नमः पापारि-मूर्त्तये ॥५
भुक्ति-मुक्ति-प्रदायिन्यै भद्रदायै नमो नमः, भोगोपभोग-दायिन्यै भोगवत्यै नमोऽस्तु ते ॥६
मन्दाकिन्यै नमस्तेऽस्तु स्वर्गदायै नमो नमः, नमस्त्रैलोक्य-भूषायै त्रि-पथायै नमो नमः ॥७
नमस्त्रि-शुक्ल-संस्थायै क्षमा-वत्यै नमो नमः, त्रिहुताशन-संस्थायै तेजो-वत्यै नमो नमः ॥८
नन्दायै लिङ्ग-धारिण्यै सुधा-धारात्मने नमः, नमस्ते विश्व-मुख्यायै रेवत्यै ते नमो नमः ॥९
बृहत्यै ते नमस्तेऽस्तु लोक-धात्र्यै नमोऽस्तु ते, नमस्ते विश्व-मित्रायै नन्दिन्यै ते नमो नमः ॥१०
पृथिव्यै शिवामृतायै च सु-वृषायै नमो नमः, परापर-शताढ्यायै तारायै ते नमो नमः ॥११
पाश-जाल-निकृन्तिन्यै अभिन्नायै नमोऽस्तु ते, शान्तायै च वरिष्ठायै वरदायै नमो नमः ॥१२
उग्रायै सुख-जग्ध्यै च सञ्जीविन्यै नमोऽस्तु ते, ब्रह्मिष्ठायै ब्रह्मदायै दुरितघ्न्यै नमो नमः ॥१३
प्रणतार्त्ति-प्रभञ्जिन्यै जगन्मात्रे नमोऽस्तु ते, सर्वापत्-प्रति-पक्षायै मङ्गलायै नमो नमः ॥१४
शरणागत-दीनार्त्त-परित्राण-परायणे, सर्वस्यार्त्ति-हरे, देवि, नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥१५
निर्लेपायै दुर्ग-हन्त्र्यै ते नमो नमः, परापर - परायै च गङ्गे ! निर्वाण-दायिनि ! ॥१६
गङ्गे ! ममाग्रतो भूया, गङ्गे ! मे तिष्ठ पृष्ठतः, गङ्गे ! मे पार्श्वयोरेधि, गङ्गे ! त्वय्यस्तु मे स्थितिः॥१७
आदौ त्वमन्ते मध्ये च सर्वं त्वं गाङ्ग ते शिवे, त्वमेव मूलं प्रकृतिस्त्वं पुमान् पर एव हि ।
गङ्गे ! त्वं परमात्मा च शिवस्तुभ्यं नमः शिवे ! ॥१८

॥ फल-श्रुति ॥

य इदं पठते स्तोत्रं शृणुयाच्छ्रद्धयाऽपि । दशधा मुच्यते पापैः काय-वाक्-चित्त-सम्भवैः ॥ १
रोगस्थो रोगतो मुच्येद् विपद्ग्रस्तश्च विपद्-युतः। मुच्यते बन्धनाद् बद्धो भीतो भीतेः प्रमुच्यते ॥२
सर्वान् कामानवाप्नोति प्रेत्य च त्रि-दिवं व्रजेत् । दिव्यं विमानमारुह्य दिव्य-स्त्री-परिवीजितः ॥३

स्कन्द-पुराणोक्त श्रीगंगा-स्तोत्र

का

हिन्दी-रूपान्तर

पूर्व-पीठिका

स्कन्द अर्थात् कार्तिकेय से भगवान् शिव ने कहा—श्री गङ्गा की महिमा को जाननेवालों पर, भले ही वे गंगा से दूर निवास करते हों और अज्ञानियों पर भी, उनकी भक्ति से गंगाजी प्रसन्न होती हैं। जो गंगा की महिमा को सुनते हैं और पढ़ते हैं, वे समस्त पापों से छुटकारा पा जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं ॥१-२

पूर्व जन्मों के घोर पापों से और नरक में जाने से बचने के लिए गंगा के सम्मुख आगे बताये स्तोत्र का पाठ करना चाहिये ॥ ३-४

स्तोत्र

ॐ शिवा को नमस्कार है, शिवदा गंगा को बारम्बार नमस्कार है। आप विष्णु-रूपिणी को नमस्कार है, आप ब्रह्म-मूर्ति को नमस्कार। रुद्र-रूपिणी आपको नमस्कार, आप शाङ्करी को नमस्कार। सर्व-देव-स्वरूपिणी, भेषज (औषध)-मूर्ति को नमस्कार है ॥ १-२

सभी के समस्त रोगों की श्रेष्ठ वैद्य-रूपा आपको नमस्कार। चर-अचर से उत्पन्न विष को नष्ट करनेवाली, आपको नमस्कार। संसार के दूषित प्रभाव को नष्ट करनेवाली, जीवन देनेवाली आपको नमस्कार। तीनों तापों का नाश करनेवाली, प्राणों की ईश्वरी आपको बारम्बार नमस्कार ॥३-४

शान्ति और सन्तान देनेवाली, पवित्र स्वरूपा आपको नमस्कार। सभी प्रकार से विशुद्ध बनानेवाली, पापनाशक-स्वरूपा आपको नमस्कार। भोग और मोक्ष देनेवाली, कल्याण-प्रदायिनी को बारम्बार नमस्कार। तीनों लोकों को विभूषित करनेवाली, तीनों मार्गों को जाननेवाली को बारम्बार नमस्कार॥५-६

मन्दाकिनी को नमस्कार, स्वर्ग-दायिनी को बारम्बार नमस्कार। तीनों लोकों को सुशोभित करनेवाली को नमस्कार। त्रि-पथा को बारम्बार नमस्कार। त्रि-शुक्ल-संस्था को नमस्कार। क्षमावती को बारम्बार नमस्कार। अग्नि-त्रय में विराजमाना, तेजः-स्वरूपिणी को बारम्बार नमस्कार ॥७-८

नन्दा, लिंग-धारिणी और अमृत-धारावाली को नमस्कार। विश्व-मुख्या को नमस्कार और आप रेवती को बारम्बार नमस्कार। आप वृहती को नमस्कार, आप लोक-धात्री को नमस्कार। विश्व-मित्रा को नमस्कार, आप नन्दिनी को बारम्बार नमस्कार ॥ ९-१०

पृथ्वी, शिवामृता और सुवृषा आपको नमस्कार। परापर-शताढ्या, तारा आपको बारम्बार नमस्कार। पाशों के जाल काटनेवाली, अभिन्ना आपको नमस्कार। शान्ता, वरिष्ठा और वरदा को बारम्बार नमस्कार ॥११-१२

उग्रा, सुख-जग्धी और सञ्जीविनी आपको नमस्कार। ब्रह्मिष्ठा, ब्रह्मदा, पापघ्नी को बारम्बार नमस्कार। शरणागत के दुःखों का नाश करनेवाली, जगन्माता आपको नमस्कार। सभी आपत्तियों की विनाशिका मंगला को बारम्बार नमस्कार ॥ १३-१४

शरणागत दीन-जनों की रक्षा में तत्परा, सभी के दुःखों को दूर करनेवाली हे देवि, नारायणि ! आपको नमस्कार । निर्लेपा, दुर्ग-हन्त्री, परापर-परा, मोक्ष-दायिनी हे गंगे ! आपको बारम्बार नमस्कार ॥१५-१६

हे गंगे ! आप मेरे सामने रहें । हे गंगे ! आप मेरे पीछे रहें । हे गंगे ! आप मेरे दोनों ओर रहें । हे गंगे ! आपमें मेरी स्थिति हो । आदि में, अन्त में और मध्य में—सर्वत्र हे शिवे ! आपका पवित्र स्वरूप रहे । आप ही मूल प्रकृति हैं और परम पुरुष हैं । हे गंगे ! आप ही परमात्मा शिव हैं । आपको नमस्कार ॥१७-१८

फल-श्रुति

जो इस स्तोत्र को श्रद्धा से पढ़ता वा सुनता है, वह शरीर, वाणी और मन से होनेवाले सभी पापों से छूट जाता है । रोगी रोग से, विपत्ति-ग्रस्त विपत्तियों से, बन्धन में पड़ा हुआ बन्धन से और भयभीत भय से छुटकारा पा जाता है । इस लोक में सभी कामनाओं को पाकर मृत्यु होने पर वह दिव्य विमान पर चढ़कर दिव्य स्त्रियों से सेवित होता हुआ स्वर्ग में जाकर निवास करता है ।

(२)

महान् संत तुलसीदास द्वारा रचित सिद्ध स्तोत्र

श्रीगंगा-स्तवन

जयति जय सुर-सरी जगदखिल-पावनी ।
विष्णु-पद-कञ्ज-मकरन्द इव अम्बु-वर वहसि, दुःख दहसि, अघ-वृन्द-विद्राविनी ॥

मिलित जल-पात्र-अज युक्त-हरि-चरण-रज, विरज-वर-वारि त्रिपुरारि-शिर-धामिनी ।
जह्नु-कन्या धन्य, पुण्य-कृत सगर-सुत । भू-धर-द्रोणि-विद्दरणि बहु-नामिनी ॥

यक्ष, गन्धर्व, मुनि, किन्नरीरग दनुज, मनुज मज्जहिं सुकृत-पुञ्ज-युत कामिनी ।
स्वर्ग - सोपान, विज्ञान - ज्ञान-प्रदे, मोह - मद - मदन-पाथोज - हिम - यामिनी ॥

हरित गम्भीर वानीर दुहुँ तीर-वर, मध्य धारा विशद, विश्व अभिरामिनी ।
नील - पर्यङ्क-कृत-शयन सर्पेश जनु, सहस - सीसावली - स्रोत - सुर - स्वामिनी ॥

अमित महिमा, अमित रूप, भूपावली, मुकुट-मनि-वन्द्य त्रैलोक-पथ-गामिनी ।
देहि रघुवीर-पद-प्रीति-निर्भर मातु, दास 'तुलसी' त्रास-हरणि भव-भामिनी ॥

महर्षि वेद-व्यास द्वारा वर्णित

प्राचीन

श्रीगंगा-माहात्म्य-कथा

[महर्षि वेद-व्यास द्वारा वर्णित भगवती गंगा की निम्न-लिखित प्राचीन माहात्म्य-कथा का पाठ सभी अध्यात्म-प्रेमी बन्धुओं के लिये कल्याणकारी है। इसके विधान-सहित पाठ से पाठ-कर्त्ता को भोग और मोक्ष दोनों सुलभ हो सकते हैं। स्वयं नारद मुनि ने इस कथा को सुनकर गङ्गा-तट पर जाकर तप किया, तो वे साक्षात् ब्रह्मा के समान तेजस्वी हो गये।

आधुनिक काल में तो गङ्गा जी का सान्निध्य प्रायः सभी को प्राप्य है। हरिद्वार, प्रयाग, काशी, पटना, गङ्गा-सागर आदि कहीं भी पहुँचकर—इस कथा का पाठ या श्रवण (सुनना) कर वहाँ तीन या एक रात निवास करते हुये श्रीगङ्गा के ध्यान एवं पूजन आदि में तत्पर रहे, तो अनन्त पुण्य का लाभ मिलता है। शीघ्र ही इस पृथ्वी पर स्वर्ग-जैसा सुख भोगने का अवसर पाकर, अन्त में मोक्ष मिलना निश्चित हो जाता है।

इस कथा का केवल एक बार पाठ या श्रवण करने की आवश्यकता है। इसके बाद वहीं श्रीगङ्गा जी के तट पर यथा-शक्ति भगवती गङ्गा जी का मन्त्र-जप, स्तोत्र-पाठ, हवन, दान-दक्षिणादि करने से सभी प्रकार के यज्ञों का फल मिल जाता है।

कलि-युग में इस विधि से पतित-पावनी श्रीगङ्गा जी की प्राचीन माहात्म्य-कथा को सुनकर धर्म-कर्म करना विशेष फल-दायक होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं।

इस कथा के उक्त महत्त्व को ध्यान में रखते हुये मूल-पाठ के बाद, इसका हिन्दी-रूपान्तर भी दिया जा रहा है। जो बन्धु संस्कृत न जानते हों; जिनके लिये मूल संस्कृत-पाठ का श्रवण सम्भव न हो, वे हिन्दी-रूपान्तर-पाठ एवं श्रवण द्वारा लाभ उठा सकते हैं।]

॥ द्विजा ऊचुः ॥

गङ्गायाः कीर्तनं व्यास ! श्रुतं त्वत्तो विनिर्मलम् ।
गङ्गा कस्मात् किमाकारा कुतः सा ह्यति-पावनी ॥

॥ श्रीवेदव्यास उवाच ॥

शृणुध्वं कथयाम्यद्य कथां पुण्यां पुरातनीम् ।
यां श्रुत्वा मोक्ष-मार्गं च प्राप्नोति नर-सत्तमः ॥
ब्रह्म-लोकं पुरा गत्वा नारदो मुनि-पुङ्गवः ।
नत्वा विधिं च पप्रच्छ पूतं त्रैलोक्य-पावनम् ॥
किं सृष्टं च त्वया तात ! सम्मतं शम्भु-कृष्णयोः ।
सर्व-लोक-हितार्थाय भुवः स्थाने समीहितम् ॥

देवी वा देवता का वा सर्वासामुत्तमोत्तमा ?
यां समासाद्य देवाश्च दैत्य-मानुष-पन्नगाः ।।
अण्डजाः स्वेदजा वृक्षा ये चान्य उद्भिज्जादयः ।
सर्वे यान्ति शिवं ब्रह्मन् ! समग्रं विभवं ध्रुवम् ।।

।। श्रीब्रह्मोवाच ।।

सृजता च पुरा प्रोक्ता माया प्रकृति-रूपिणी ।
आद्या भवस्य लोकानां त्वत्तो भवं सृजाम्यहम् ।।

एतच्छ्रुत्वा परा सा च सप्तधा च अभवत् तदा ।
गायत्री वाक् च स्वर्लक्ष्मीस्सर्व-सस्य-वसु-प्रदा ।।
ज्ञान-विद्या उमा देवी शक्ति-बीजा तपस्विनी ।
वर्णिका धर्म-द्रवा च एताः सप्त प्रकीर्तिताः ।।

गायत्री-प्रभवा वेदा वेदात् सर्वं स्थितं जगत् ।
स्वस्ति स्वाहा स्वधा दीक्षा एता गायत्रिजाः स्मृता ।।
उच्चारयेत् सदा यज्ञं गायत्रीं मातृकादिभिः ।
क्रतौ देवाः स्वधां प्राप्य भवेयुरजरामराः ।।

ततः सुधा-रसं देवा मुमुचुर्धरणी - तले ।
अथ सस्य-वती पृथ्वी औषधीनां परा शुभा ।।
फल-मूलै रसैः भक्ष्यैः जना सुस्थ-तराऽभवन् ।
भारती सर्व-लोकानां चानने मानसे स्थिता ।।

तथैव सर्व-शास्त्रेषु धर्मोद्देशं करोति सा ।
विज्ञानं कलहं शोकं मोहामोहं शिवाशिवम् ।।
तया विना जगत् सर्वं यात्यतत्त्वमिति स्मृतम् ।
कमला - सम्भवश्चैव वस्त्र - भूषण - सञ्चयः ।।

सुखं राज्यं त्रिलोके तु ततः सा हरि-वल्लभा ।
उमया हेतुना शम्भोर्ज्ञानं लोकेषु सन्ततम् ।।
ज्ञान-माता च सा ज्ञेया शम्भोरर्धांग-वासिनी ।
वर्णिका शक्तिरत्युग्रा सर्व-लोक-प्रमोहिनी ।।

सर्व-लोकेषु लोकानां स्थिति-संहार-कारिणी ।
देव्या च निहतौ पूर्वमसुरौ मधु-कैटभौ ।।
रुरुश्चापि हतो घोरः सर्व - लोक-परिश्रुतः ।
सर्व-देवैक - जेतारं सा जघ्ने महिषासुरम् ।।
निहता लीलया देव्या येऽसुरा दैत्य-पुंगवाः ।
एवं बलानि दैत्यानां निहत्य सर्वदा तया ।।
पालितं मोदितं चैव कृत्स्नमेतज्जगत्-त्रयम् ।
धर्म-द्रव-स्वरूपा च सर्व - धर्म - प्रतिष्ठिता ।
महतीं तां समालोक्य मया कमण्डलौ धृता ।
विष्णु-पादाब्ज-सम्भूता शम्भुना शिरसा धृता ।।
अस्माभिश्च त्रिभिर्युक्ता ब्रह्म-विष्णु-महेश्वरैः ।
धर्म-द्रवा परिख्याता जल-रूपा कमण्डलौ ।।
वलि-यज्ञेषु सम्भूता विष्णुना प्रभ - विष्णुना ।
छद्मना छलितः पूर्वं बलिर्बल - वतां वरः ।।
ततः पाद-द्वयेनैव क्रान्तं सर्वं मही-तलम् ।
नमः पादश्च ब्रह्माण्डं भित्वा मम पुरः स्थितः ।।
मया सम्पूजितः पादः कमण्डलु - जलेन वै ।
प्रक्षाल्यैवार्चितात् पादाद् हेम-कूटेऽपतज्जलम् ।।
तत्-कूटाच्छङ्करं प्राप्य भ्रमते सा जटा-स्थिता ।
ततो भगीरथेनैव समाराध्य शिवं भुवि ।।
आनीयाराधितो नित्यं तपसा गज - पुङ्गवः ।
तेन भित्वा नगं वीर्यात् त्रिभिर्दन्तैः कृतं विलम् ।।
ततस्त्रि-विलगा यस्मात् त्रि-स्रोता लोक-विश्रुता ।
हरि-ब्रह्म-हर-योगात् पूता लोकस्य पावनी ।।
समासाद्य च तां देवीं सर्व-धर्म-फलं लभेत् ।
पाठ - यज्ञ - परैः सर्वैर्मन्त्र - होम - सुरार्चनैः ।।
सा गतिर्न भवेज्जन्तोर्गङ्गा-संसेवया च या ।
धर्मस्य साधनोपायो ह्यतः परो न विद्यते ।।

त्रैलोक्य-पुण्य-संयोगात् तस्मात् तां व्रज नारद !
गङ्गा-तोयास्थि - संयोगात् सुतास्ते सागरस्य च ।।
स्वर्गताः पितृभिश्चैव स्व-पूर्वापरजैः सह ।।

।। श्रीवेदव्यास उवाच ।।

ततो ब्रह्म-मुखाच्छ्रुत्वा नारदो मुनि-पुङ्गवः ।
गङ्गा-द्वारे तपः कृत्वा ब्रह्मणा सदृशोऽभवत् ।।
सर्वत्र सुलभा गङ्गा त्रिषु स्थानेषु दुर्लभा ।
गङ्गा - द्वारे प्रयागे च गङ्गा - सागर - सङ्गमे ।।
त्रि-रात्रेणैक-रात्रेण नरो याति परां गतिम् ।
तस्मात् सर्व - प्रयत्नेन सद्यो मुक्तिं विचिन्तयेत् ।।
ततो गच्छतः धर्मज्ञाः शिवां भागीरथीमिह ।
अचिरेणैव कालेन स्वर्गं मोक्षं प्रगच्छथ ।।
विशेषात् कलि-काले च गङ्गा मोक्ष-प्रदा नृणाम् ।
कृच्छ्राच्च क्षीण-सत्वानामनन्तः पुण्य - सम्भवः ।।

।। पुलस्त्य उवाच ।।

ततस्ते ब्राह्मणा हृष्टाः श्रुत्वा व्यासादि-गिरं शुभाम् ।
गङ्गायां तु तपस्तप्त्वा मोक्ष-मार्गं ययुस्तदा ।।
य इदं शृणुयान्मर्त्यः पुण्याख्यानमनुत्तमम् ।
सर्वं तरति दुःखौघं गङ्गा-स्नान-फलं लभेत् ।।
सकृदुच्चारिते चैव सर्व-यज्ञ-फलं लभेत् ।
दानं जप्यं तथा ध्यानं स्तोत्रं मन्त्र-सुरार्चनम् ।।
तत्रैव कारयेद् यस्तु स चानन्त-फलं लभेत् ।
तस्मात् तत्रैव कर्त्तव्यं जप-होमादिकं नरैः ।
अनन्तं च फलं जन्म-जन्मसु लभ्यते ।।

।। श्रीपाद्म-पुराणे प्रथमे सृष्टि-खण्डे श्रीगङ्गा-माहात्म्यं नाम चतुष्षष्टितमोऽध्यायः ।।

हिन्दी

श्रीगंगा-माहात्म्य-कथा

ब्राह्मणों ने कहा—हे व्यास जी ! आपसे हम लोगों ने गङ्गाजी की उत्तम प्रशंसा सुनी। कृपया बताएँ कि गंगा का जन्म किससे हुआ, उनका स्वरूप कैसा है और वे इतनी पवित्र करनेवाली कैसे हुईं ?

श्री वेदव्यास जी बोले—सुनो, आज मैं वह प्राचीन पवित्र कथा सुनाता हूँ, जिसे सुनकर श्रेष्ठ मनुष्य मोक्ष-पथ को पा लेता है। पुरा काल में श्रेष्ठ मुनि नारद जी ने ब्रह्म-लोक में पहुँचकर ब्रह्माजी को प्रणाम कर तीनों लोकों को पवित्र करनेवाले तथ्य को पूछा—

'हे पिताजी ! सभी लोकों के कल्याण के लिए, भगवान् शिव और विष्णु द्वारा समर्पित कौन सी रचना आपने की है ? सभी से श्रेष्ठ वह कौन सी देवी या देवता हैं, जिनकी उपासना कर देव, दानव, मनुष्य, नाग, अण्ड-जन्मा, स्वेद-जन्मा, वृक्ष और अन्य उद्भिज आदि सभी प्राणी निश्चय ही सब प्रकार के ऐश्वर्य को पाकर कल्याण को प्राप्त करते हैं ?'

ब्रह्मा जी ने कहा—'पुरा-काल में मैंने प्रकृति-रूपिणी माया से कहा कि आप ही सभी लोकों की आद्या हैं, अतः आप ही से मैं संसार की रचना करता हूँ। यह सुनकर उन परा देवी ने अपने सात स्वरूप प्रकट किये—१ गायत्री, २ वाक्, ३ समस्त धन-धान्य-दायिनी लक्ष्मी, ४ ज्ञान-विद्या, ५ शक्ति-बीजा, तपस्विनी उमा देवी, ६ वर्णिका और ७ धर्म-द्रवा।

'गायत्री' से वेद उत्पन्न हुये और वेद से समस्त जगत् परिपूर्ण हो गया। स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा और दीक्षा—ये गायत्री से उत्पन्न हुए। मातृका आदि से सदा यज्ञ-स्वरूपा गायत्री का उच्चारण करना चाहिये। यज्ञ में 'स्वधा' को पाकर सभी देव अजर और अमर हो गये। तदनन्तर देवताओं ने धरती पर अमृत रस की वर्षा की और पृथ्वी शस्य अर्थात् धान्यादि तथा औषधियों से युक्त होकर अति कल्याण-कारिणी हो गई, जिससे जनता फल, मूल, रसादि खाद्य पदार्थों को पाकर अधिकाधिक स्वस्थ हो गई।

'भारती' अर्थात् सरस्वती वाक्-शक्ति ने सभी लोकों के मुख और मन में विराजमाना होकर सभी शास्त्रों में विज्ञान, कलह, शोक, मोह-अमोह, शिव और अशिव की विवेचना कर 'धर्म' को मुख्य लक्ष्य रूप में प्रतिष्ठित किया। उस वाक्-शक्ति के बिना सारा जगत् तत्त्व-हीन है, ऐसा सभी ने अनुभव किया।

'कमला' अर्थात् लक्ष्मी से तीनों लोकों में वस्त्र, आभूषणादि का सम्भार होकर सुख का साम्राज्य छा गया और वह विष्णु-प्रिया के नाम से प्रसिद्ध हुई।

'उमा' के द्वारा भगवान् शङ्कर का ज्ञान सभी लोकों में फैला, जिससे वे ज्ञान-माता शिव के अर्द्धाङ्ग में रहनेवाली जानी गईं।

'वर्णिका' शक्ति अत्यन्त उग्र तेजवाली हैं। वे सभी लोकों को मोह में डाल देती हैं। वे सभी लोकों में स्थिति और संहार करनेवाली हैं। उन्हीं देवी ने पुरा-काल में मधु और कैटभ दो असुरों का नाश किया। भयानक रुरु नामक असुर भी मारा गया, जो सभी लोकों में ज्ञात है। सभी देवों को जीतनेवाले महिषासुर का संहार उन्हीं देवी ने किया। अपनी लीला से देवी ने बड़े-से-बड़े दैत्यों का नाश किया। इस प्रकार दैत्यों की शक्ति को नष्ट कर उन देवी ने इन तीनों लोकों का सदैव पालन-पोषण कर उसे आनन्द-मय रखा है।

'धर्म-द्रवा' के स्वरूप में वे प्रकृति देवी सभी धर्मों में प्रतिष्ठिता हैं। उन महिमा-मयी के दर्शन कर मैंने उन्हें अपने कमण्डलु में धारण किया। वे भगवान् विष्णु के चरण-कमलों से निकलीं और भगवान् शङ्कर ने उन्हें अपने मस्तक पर धारण किया। हम ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर तीनों के तेज से युक्ता, 'धर्म-द्रवा' नाम से विख्याता वही मेरे कमण्डलु में जल-रूपा विद्यमान हैं। राजा बलि के यज्ञ में पूर्व-काल में प्रतापी भगवान् विष्णु ने छद्म रूप से बलि को भ्रमित कर वर लेकर दो पगों से सारी पृथ्वी को घेर लिया, फिर तीसरे पग में ब्रह्माण्ड का भेदन कर उनके चरण मेरे लोक में आ पहुँचे। तब कमण्डलु के जल से उन चरणों को मैंने धोया। पैरों को धोकर पूजन करने से वह जल हेम-कूट पर गिरा, जिसे भगवान् शिव ने अपनी जटा पर धारण किया। राजा भगीरथ ने शिव की आराधना कर अपने तपो-बल से उसे पृथ्वी पर पहुँचा दिया।

विष्णु, शिव और ब्रह्मा के तेज से सम्पन्न वही पवित्र गङ्गाजी लोक-पावनी हैं। उनके पास पहुँचकर सभी धर्मों का फल सहज ही मिल जाता है। पाठ, यज्ञ, मन्त्र, होम-देवार्चनादि से प्राणियों को वह गति नहीं मिलती, जो गङ्गा जी के सेवन से प्राप्त होती है। अतः गङ्गा जी से बढ़कर धर्म का अन्य साधन नहीं है। त्रैलोक्य के पुण्य के संयोग से हे नारद ! तुम उन्हीं गङ्गा जी के पास निवास करो। गङ्गा-जल से अस्थियों का संयोग होने से स्वर्गीय पितरों के सहित अपनी और अपनी बाद की सन्ततियों को भी मुक्ति होती है।'

श्री वेदव्यास जी ने कहा—ब्रह्मा जी की बात सुनकर मुनि-श्रेष्ठ नारद जी ने जाकर गङ्गा-द्वार पर तप किया, जिसके फल-स्वरूप वे ब्रह्मा के समान ही तेजस्वी हुये। दुर्लभ गङ्गा जी गङ्गा-द्वार, प्रयाग और गङ्गा-सागर के सङ्गम—तीनों स्थान पर सुलभ हैं, जहाँ तीन या एक रात्रि निवास करने से मनुष्य श्रेष्ठ गति को प्राप्त करता है। अतः सब प्रकार से तुरन्त मोक्ष पाने की चिन्ता करनी चाहिये। धर्मज्ञ लोग इस पृथ्वी-लोक में कल्याण-कारिणी भागीरथी गङ्गा जी के पास जाकर शीघ्र ही मोक्ष को प्राप्त करते हैं। विशेष कर कलियुग में मनुष्यों के लिये गङ्गा जी ही मोक्ष-दायिनी हैं। दुर्बल प्राणियों के लिये वे सहज ही पुण्य-लाभ करा देती हैं।

पुलस्त्य ऋषि ने कहा—श्री वेदव्यास की कल्याण-कारी बात सुनकर वे सभी ब्राह्मण प्रसन्न होकर गङ्गा जी के तट पर गये और वहाँ तप कर उन्होंने मोक्ष प्राप्त किया।

फल-श्रुति

जो मनुष्य इस पवित्र और श्रेष्ठ कथा को सुनता है, वह सभी दुःखों से छूटकर गङ्गा-स्नान करने का पुण्य प्राप्त करता है। केवल एक बार इस कथा का पाठ करने से सभी यज्ञों का पुण्य-फल उसे मिल जाता है। जो गङ्गा किनारे दान, जप, ध्यान, स्तोत्र-पाठ, मन्त्रात्मक देव-पूजादि करता है, वह उस सबका अनन्त फल पाता है। अतः मनुष्यों को वहीं जप-होमादि करना चाहिए। इससे जन्म-जन्मान्तर तक वह अनन्त फल प्राप्त करता है।

॥ श्रीयमुनायै नमः ॥

भगवती यमुना

की

आनन्द-दायिनी स्तुति

(१)

पाठ-विधि

दोनों हाथ जोड़कर, 'प्रणाम-मुद्रा' में यमुना-जल में खड़े होकर पूर्ण श्रद्धा के साथ निम्न-लिखित स्तुति का पाठ कर तीन या पाँच डुबकी लगाये।

अथवा यमुना नदी के बाहर, यमुना-जल से तीन बार आचमन करे। इसके पश्चात् दोनों हाथों को यमुना-जल से स्वच्छ करे। फिर दोनों हाथ जोड़कर, पद्मासन या सुखासन में बैठकर पूर्ण श्रद्धा के साथ निम्न-लिखित स्तुति का पाठ करे। अन्त में 'यमुना-जल' को अपने मस्तक पर लगावे।

॥ स्कन्द-पुराणोक्त यमुना-स्तुति ॥

दृष्टेन वन्दितेनापि स्पृष्टेन च धृतेन च।
नरा येन विमुच्यन्ते तदेतद् यामुनं जलम् ॥१

जिसके दर्शन, वन्दन, स्पर्श तथा धारण करने से मनुष्य भव-बन्धन से मुक्त हो जाते हैं, यह वही यमुना जी का जल है।

तावद् भ्रमन्ति भुवने मनुजा भवोत्थ-दारिद्र्य-रोग - मरण-व्यसनाभि - भूताः।
यावज्जलं तव महा-नदि नील नीलं, पश्यन्ति नो दधति मूर्धसु सूर्य-पुत्रि ! ॥२

हे सूर्य-पुत्री महा-नदी यमुना जी ! मनुष्य इस विश्व में दरिद्रता, रोग, मरण, व्यसन आदि दुःखों से पीड़ित होकर तब तक भटकते रहते हैं, जब तक वे नील-मणि के सदृश आपके नीले जल का दर्शन नहीं करते, उसे मस्तक पर नहीं चढ़ाते।

* * *

(२)

श्रीमद्-वल्लभाचार्य विरचित

श्रीयमुनाष्टक-स्तोत्रं

नमामि यमुनामहं सकल-सिद्धि-हेतुं मुदा, मुरारि-पद-पङ्कज-स्फुरदमन्द-रेणूत्कटाम् ।
तटस्थ-नव-कानन-प्रकट-मोद-पुष्पाम्बुना, सुरासुर-सुपूजित-स्मर-पितुः श्रियं बिभ्रतीम् ।।१

कलिन्द-गिरि-मस्तके पतदमन्द-पूरोज्ज्वला, विलास-गमनोल्लसत्-प्रकट-गण्ड-शैलोन्नता ।
सघोष-गति-दन्तुरा समधि-रूढ-दोलोत्तमा, मुकुन्द-रति-वर्द्धिनी जयति पद्म-बन्धोः सुता ।।२

भुवं भुवन-पावनीमधि-गतामनेक-स्वनैः, प्रियाभिरिव सेवितां शुक-मयूर-हंसादिभिः ।
तरङ्ग-भुज-कङ्कण-प्रकट-मुक्तिका-बालुकां, नितम्ब-तट-सुन्दरीं नमत कृष्ण-तुर्य-प्रियाम् ।।३

अनन्त-गुण-भूषिते शिव-विरञ्चि-देव-स्तुते, घनाघन-निभे सदा ध्रुव-पराशराभीष्टदे !
विशुद्ध-मथुरा-तटे सकल-गोप-गोपी-वृते, कृपा-जलधि-संश्रिते मम मनः सुखं भावय ।।४

यया चरण-पद्मजा मुर-रिपोः प्रियं भावुका, समागमनतोऽभवत् सकल-सिद्धिदा सेवताम् ।
तया सदृशतामियात् कमलजा सपत्नीव, यद्धरि-प्रिय-कलिन्दया मनसि मे सदा स्थीयताम् ।।५

नमोऽस्तु यमुने ! सदा तव चरितमत्यद्भुतं, न जातु यम-यातना भवति ते पयः-पानतः ।
यमोऽपि भगिनी-सुतान् कथमु हन्ति दुष्टानपि, प्रियो भवति सेवनात् तव हरेर्यथा गोपिकाः ।।६

ममास्तु तव सन्निधौ तनु-नवत्वमेतावता, न दुर्लभ-तमा रतिर्मुर-रिपौ मुकुन्द-प्रिये !
अतोऽस्तु तव लालना सुरधुनी परं सङ्गमात्, तवैव भुवि कीर्तिता न तु कदापि पुष्टि-स्थितैः ।।७

स्तुतिं तव करोति कः कमलजा-सपत्नि प्रिये, हरेर्यदनु-सेवया भवति सौख्यमामोक्षतः ।
इयं तव कथाधिका सकल-गोपिका-सङ्गम-स्मर-श्रम-जलाणुभिः सकल-गात्रजैः सङ्गमः ।।८

तवाष्टकमिदं मुदा पठति सूर-सूते ! सदा, समस्त दुरित-क्षयो भवति वै मुकुन्दे रतिः ।
तया सकल-सिद्धयो मुर-रिपुश्च सन्तुष्यति, स्वभाव-विजयो भवेद् वदति वल्लभः श्रीहरेः ।।९

हिन्दी यमुनाष्टक स्तोत्र

भगवान् विष्णु के चरण-कमलों से प्रस्फुरित तेज से उज्ज्वल धूलि से उद्दीप्ता, तट-वर्ती नवीन वनों के सुगन्धित पुष्पों से सुवासित जल के द्वारा देव-दानवों से वन्दित, प्रद्युम्न के पिता भगवान् श्रीकृष्ण की श्याम शोभा को धारण करनेवाली, सम्पूर्ण सिद्धियों की मूल-भूता यमुना जी को मैं सानन्द नमस्कार करता हूँ ।।१

कलिन्द पर्वत के शिखर पर गिरती हुई तीव्र जल-धारा से उज्ज्वला लीला-मयी गति से शोभान्विता, दृश्यमान चट्टानों से उठी हुई, ध्वनि-पूर्ण गति से उछलती लहरोंवाली, ऊँचे-नीचे प्रवाह से उत्तम झूले पर झूलती जैसी, भगवान् श्रीकृष्ण के प्रेम को बढ़ानेवाली सूर्य-पुत्री यमुना की जय हो ।।२

पृथ्वी और लोकों को पवित्र करनेवाली, तोतों - मोरों और हंसों आदि द्वारा प्रिय सखियों के समान विविध कलरवों से सेवा पानेवाली, लहर-रूपी बाँहों के कङ्कनों में जड़े हुये मोती-रूप बालू के कणोंवाली, नितम्ब-वत् तटों से सुन्दर लगनेवाली, भगवान् श्रीकृष्ण की चौथी प्रियतमा यमुना को नमस्कार ।।३

अनन्त गुणों से विभूषिते ! शिव-ब्रह्मादि देवों से वन्दिते ! मेघों की काली घटा-समान श्याम-वर्णे ! ध्रुव-पराशरादि को अभीष्ट-दायिनि ! विशुद्ध मथुरा-तटवाली, सभी गोप-गोपियों से घिरी रहनेवाली, दया-सागर भगवान् श्रीकृष्ण की आश्रिते, हे यमुने ! मेरे मन को सुखी बनाओ ।।४

भगवान् विष्णु के चरण-कमलों से जन्मी गङ्गा जी जिनसे मिलने के कारण ही भगवान् को प्रिय और भक्तों को सर्व-सिद्धि-दायिनी हुईं, उन यमुना जी की समता लक्ष्मी जी सपत्नी-वत् ही कर सकीं। ऐसी श्रीकृष्ण-प्रिया यमुना जी मेरे मन में सदा निवास करें ।।५

हे यमुने ! तुम्हें सदा नमस्कार। तुम्हारा चरित अति विलक्षण है। तुम्हारा जल पीने से यम का कष्ट कभी नहीं होता। यम अपनी बहन के दुष्ट पुत्रों को भी कैसे मार सकते हैं ? तुम्हारी सेवा से भक्त, गोपियों के समान, भगवान् श्रीकृष्ण का प्रिय हो जाता है ।।६

हे श्रीकृष्ण-प्रिये, यमुने ! तुम्हारे समीप मेरे शरीर का नवीनीकरण हो। इतने से ही श्रीकृष्ण में प्रेम दुर्लभ नहीं रहता। अतः तुम्हारी स्तुति हो। तुमसे मिलने से ही गङ्गा जी पृथ्वी पर वन्दिता हुईं, नहीं तो पुष्टि-मार्गी वैष्णवों द्वारा कभी न होतीं ।।७

लक्ष्मी की सपत्नी, हे श्रीकृष्ण-प्रिये, यमुने ! तुम्हारी स्तुति कौन कर सकता है ? भगवान् की निरन्तर सेवा से मोक्ष तक सुख मिलता है, किन्तु तुम्हारी यह अधिक महिमा है कि तुम्हारे जल के सेवन द्वारा सभी गोपियों से श्रीकृष्ण के समागम से सभी अङ्गों से उत्पन्न प्रेम-लीला-जन्य स्वेद-जल-विन्दुओं का सम्पर्क हो जाता है ।।८

हे सूर्य-कन्ये, यमुने ! जो तुम्हारे इस 'अष्टक' को सदा सानन्द पढ़ता है, उसके सारे पापों का नाश हो जाता है और उसे श्रीकृष्ण का प्रेम प्राप्त होता है। यही नहीं, उसे सारी सिद्धियाँ मिल जाती हैं, भगवान् प्रसन्न होते हैं और स्वभाव पर विजय मिलती है। यह श्रीहरि के वल्लभ कहते हैं ।।९

गंगा जी का माहात्म्य

गंगा अन्य नदियों की भाँति एक साधारण नदी नहीं है। गंगा का जल मात्र पानी नहीं समझा जाता। वह साक्षात् अमृत है। यह गंगा देवी या सुर-सरि है। इसमें दैविक शक्ति है। अतः इसके दर्शन, स्पर्शन से चित्त पवित्र व शान्त होकर, यदि पाप नष्ट हो जाते हैं, तो इसमें क्या आश्चर्य! परन्तु इसके साथ-साथ आभ्यन्तर पञ्च-तीर्थ में स्नान करने से विशेष फल-सिद्धि होती है, जैसे कहा है :—

सत्य-तीर्थं क्षमा-तीर्थमिन्द्रिय-निग्रहः सर्व-भूत-दया-तीर्थं तीर्थमार्जवमेव च।

अर्थात् १ सत्य, २ क्षमा, ३ इन्द्रिय - निग्रह, ४ सभी प्राणियों पर दया और ५ अहिंसा—ये पाँच तीर्थ हैं। इन पाँचों का पालन करते हुए जीवन बिताना चाहिए।

तीर्थ-यात्रा से क्या लाभ होता है ?

इस भू-मण्डल पर अनेक तीर्थ-स्थान हैं। जैसे—पुष्कर, कुरुक्षेत्र, प्रभाष-क्षेत्र, नैमिषारण्य, अर्बुदारण्य, मान-सरोवर, हरिद्वार, बद्रीनाथ, केदारनाथ, काशी, रामेश्वर, द्वारका, जगन्नाथपुरी, आदि-आदि। इन स्थानों का वातावरण अत्यन्त पवित्र और शुद्ध होता है। इन स्थानों में पर्वत-श्रेणियाँ, सरोवर तथा कल-कल मधुर शब्द करनेवाली नदियों का दृश्य मन के ताप को हरण कर एकदम शान्त बना देता है। इन तीर्थों में स्नान-दान करने से महान् फल होता है। इन स्थानों में जाकर देव-दर्शन एवं ऋषि, मुनि व संन्यासी महात्माओं के सत्संग के द्वारा ज्ञानोपदेश प्राप्त करना चाहिये। यहाँ अपने गृह-कार्यों को भुलाकर संयम-पूर्वक भगवान् का भजन करना चाहिये। क्योंकि कहा है—

अन्यस्थाने कृतं पापं तीर्थ-स्थाने विनष्यति। तीर्थ-स्थाने कृतं पापं वज्र-लेपो भविष्यति॥

अर्थात् अन्य स्थानों में किये गये पाप तो तीर्थ-स्थानों में जाकर नष्ट हो जाते हैं, पर तीर्थ-स्थान पर किये हुये पाप वज्र-लेप के समान अमिट बन जाते हैं।

भगवती गंगा की मन्त्र-साधना

[१] आत्म-शोधन

स्नान आदि करके कर्त्ता शुद्ध स्थान में पूर्व या उत्तर की ओर मुँह करके बैठे। तब पञ्च-पात्र द्वारा दाहिने हाथ में जल लेकर निम्न-लिखित मन्त्र पढ़ते हुये जल अपने ऊपर छिड़के। यथा—

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

अर्थात्—अपवित्र हो या पवित्र अथवा किसी भी दशा में हो, जो कमल-नयन इष्ट - देवता का स्मरण करता है, वह बाहर और भीतर दोनों प्रकार से पवित्र हो जाता है।

पुनः पंच-पात्र से दाहिने हाथ में जल लेकर तीन बार आचमन करे। यथा—

१ ॐ आत्म-तत्त्वं शोधयामि स्वाहा।
२ ॐ विद्या-तत्त्वं शोधयामि स्वाहा।
३ ॐ शिव-तत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

[२] सङ्कल्प

तीन बार आचमन करने के बाद पंच-पात्र से पुनः जल लेकर दाहिने हाथ की जूठी हथेली को स्वच्छ करे। ऐसे स्वच्छ दाहिने हाथ की हथेली में पुनः बाँयें हाथ द्वारा आचमनी से जल, अक्षत, पुष्पादि लेकर सङ्कल्प पढ़े—

ॐ तत्सत् अद्यैतस्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीय-प्रहरार्द्धे श्वेत-वराह-कल्पे जम्बू-द्वीपे भरत-खण्डे अमुक-प्रदेशे अमुक-पुण्य-क्षेत्रे कलियुगे कलि-प्रथम-चरणे अमुक-सम्वत्सरे अमुक-मासे अमुक-पक्षे अमुक-तिथौ अमुक - वासरे अमुक-गोत्रोत्पन्नो अमुक-नाम-शर्मा (वर्मा, गुप्तो, दासो वा) सर्वत्र यशो-विजयादि लाभार्थं सर्वारिष्ट-निवृत्ति-पूर्वक-सकल-मनो-कामना-सिद्धयर्थं च श्रीगङ्गा-देवी-प्रीत्यर्थं श्रीगङ्गा-पूजनमहं करिष्ये।

'मन्त्र'

'मन्त्र' का अर्थ विचार है। 'मन्त्र' इस प्रकार का विचार है, जिसके जप या रटन द्वारा, मन उन्नत होकर उच्च लक्ष्य पर स्थित होता है।

'मन्त्र' द्वारा साधक अपनी उपास्या शक्ति का विचार करता है और उसे स्मरण करता है।

'आचमन'

तीन आचमनों द्वारा अपने स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर के दोषों को दूर किया जाता है। आचमन के बाद यह भावना की जाती है कि शरीर सब प्रकार से शुद्ध हो गया है।

'सङ्कल्प'

सङ्कल्प से मन में निश्चयात्मक रूप से विशेष कार्य करने की भावना होती है।

अर्थात्–ॐ तत्सत् (ब्रह्म ही एक-मात्र सत्य है)। आज ब्रह्मा के प्रथम दिवस के इस दूसरे पहर में, श्वेत-वराह नामक कल्प में, 'जम्बू' नामक द्वीप में, 'भरत' के भू-खण्ड में, अमुक नामक 'प्रदेश' में, अमुक पवित्र 'क्षेत्र' में, 'कलि-युग' में, 'कलि' के प्रथम चरण में, अमुक 'सम्वत्सर' में, अमुक 'मास' में, अमुक 'पक्ष' में, अमुक 'तिथि' में, अमुक 'दिवस' में, अमुक 'गोत्र' में उत्पन्न, अमुक 'नाम' वाला 'शर्मा' (वर्मा, गुप्त या दास) सर्वत्र यश, विजय आदि पाने के लिये व सभी अरिष्टों के निवारण के साथ समस्त कामनाओं की सिद्धि के लिये श्रीगङ्गा देवी की प्रसन्नता हेतु श्रीगङ्गा-देवी की पूजा करूँगा।

इस प्रकार संकल्प पढ़कर दाहिने हाथ में लिया हुआ जल अपने सम्मुख छोड़ दे।

[३] विनियोग

ॐ अस्य श्रीगङ्गा-मन्त्रस्य श्रीवेदव्यास ऋषिः, कृतिच्छन्दः, श्रीगङ्गा देवता, श्रीगंगा-देवी-प्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।

[४] ऋष्यादि-न्यास

ॐ श्रीवेद-व्यास-ऋषये नमः शिरसि। कृतिच्छन्दसे नमः मुखे। श्रीगंगा-देवतायै नमः हृदि। श्रीगंगा-देवी-प्रीत्यर्थं जपे विनियोगाय नमः सर्वांगे।

[५] कर-न्यास

ॐ नमः अंगुष्ठाभ्यां नमः। शिवायै तर्जनीभ्यां नमः। नारायण्यै मध्यमाभ्यां नमः। दशहरायै अनामिकाभ्यां नमः। गंगायै कनिष्ठिकाभ्यां नमः। स्वाहा करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।

[६] अङ्ग-न्यास

ॐ नमः हृदयाय नमः। शिवायै शिरसे स्वाहा। नारायण्यै शिखायै वषट्। दशहरायै कवचाय हुं। गंगायै नेत्र-त्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

न्यास

ऋष्यादि-न्यास द्वारा सभी अङ्गों में देवता की भावना की जाती है।

'सिर' पर 'मन्त्र' के सर्व-प्रथम उपासक की, 'मुख' में पवित्र छन्द की और हृदय में 'देवता' की स्थापना की जाती है।

'कर-न्यास', 'अङ्ग-न्यास' द्वारा यह धारणा की जाती है कि मैं कर्त्ता नहीं हूँ, केवल साक्षी हूँ।'

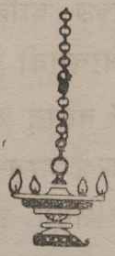

[७] ध्यान

उत्फुल्लामल-पुण्डरीक-रुचिरा कृष्णेश-विन्ध्यात्मिका,
कुम्भेष्टाभय-तोयजानि दधती श्वेताम्बरालंकृता ।
हृष्टास्या शशि-शेखराखिल-नदी-शोणादिभिः सेविता,
ध्येया पाप-विनाशिनी मकरगा भागीरथी साधकैः ।।

अर्थात् : विकसित कमल-जैसे वर्णवाली, कुम्भ-वर-अभय और कमल धारण करनेवाली, श्वेत वस्त्रों से विभूषिता, प्रसन्न-मुखी, चन्द्र-शेखरा, सभी नद और नदियों से सेविता, पाप-नाशिनी गङ्गा का मैं ध्यान करता हूँ ।

[८] मानस-पूजन

१ ॐ लं पृथ्वी-तत्त्वात्मकं गन्धं श्रीगङ्गा-देवी-प्रीतये समर्पयामि नमः ।
२ ॐ हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं श्रीगङ्गा-देवी-प्रीतये समर्पयामि नमः।
३ ॐ यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं श्रीगङ्गा-देवी-प्रीतये घ्रापयामि नमः ।
४ ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं श्रीगङ्गा-देवी-प्रीतये दर्शयामि नमः ।
५ ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं श्रीगङ्गा-देवी-प्रीतये निवेदयामि नमः ।
६ ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं श्रीगङ्गा-देवी-प्रीतये समर्पयामि नमः ।

[९] मन्त्र-जप (१०, १०८ या १००८ बार प्रतिदिन)

मन्त्र—ॐ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गंगायै स्वाहा ।

[१०] जप-समर्पण

गुह्याति-गुह्य-गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्-कृतं जपम् ।
सिद्धिर्मे भवतु देवि ! त्वत्-प्रसादान्महेश्वरि !

[११] क्षमा-प्रार्थना

मन्त्र-हीनं क्रिया-हीनं भक्ति-हीनं सुरेश्वरि !
यत् पठितं मया देवि ! परिपूर्णं तदस्तु मे ।।

[१२] पुरश्चरण (मन्त्र-सिद्धि)

इस मन्त्र का एक लाख जप हो जाने पर मन्त्र-जप का दशांश (१०,०००) होम घृत और तिल से देना चाहिये । होम का दशांश (१०००) तर्पण करना चाहिये । तर्पण का दशांश (१००) मार्जन करना चाहिये । मार्जन का दशांश (१०) कन्या का पूजन व भोजन-दान करना चाहिये ।

इस प्रकार विधि-वत् चार पुरश्चरण करने पर मन्त्र की सिद्धि होती है ।

जप

जप दो प्रकार का—१ वाचिक और २ मानसिक होता है ।

मानसिक जप तीन प्रकार का है—१ परा, २ पश्यन्ती और ३ मध्यमा । 'परा'-जप सबसे उच्च कोटि का है ।

जप शब्द-ब्रह्म या अक्षर-ब्रह्म का द्योतक है । 'शब्द' को तार्किक लोग भले ही अनित्य कहें, पर 'शब्द' आकाश का गुण है । आकाश नित्य है, अतः 'शब्द' भी नित्य है, अक्षर है ।

जप-समर्पण

हिन्दुओं की 'पूजा' वास्तव में निदिध्यासन और सविकल्प समाधि अर्थात् ब्रह्म का साक्षात्कार कराती है । इस भाव की प्राप्ति के लिये अन्त में जप-समर्पण किया जाता है ।

भगवती सरस्वती की मूर्ति की पूजा
या
चित्र की पूजा

बसन्त ऋतु के प्रारम्भ में ज्ञान-दायिनी सरस्वती देवी की पूजा का विधान निर्दिष्ट है क्योंकि इस समय हमारी अन्तः-प्रकृति सहज ही सूक्ष्म और व्यापक भावों को ग्रहण करने योग्य हो जाती है। सर्व-व्यापिनी ज्ञान-मयी सरस्वती देवी के स्वरूप की धारणा व साक्षात्कार करने के लिये यही सबसे उपयुक्त काल है।

अतः बसन्त-पञ्चमी (माघ शुक्ला पञ्चमी) के दिन ऋषियों ने भगवती सरस्वती की पूजा का निर्देश किया है। यह भगवती के आविर्भाव की तिथि है।

इस दिन भगवती की पूजा कर हृदय में उनके स्वरूप की धारणा करके प्रति-दिन सूक्ष्म और व्यापक भावों को ग्रहण करने के उद्देश्य से उपासना करने पर साधक को परा-विद्या एवं ज्ञान की प्राप्ति होती है। यहाँ षोडशोपचार-पूजन की अत्यन्त सरल पूजा-विधि दी जा रही है। पृष्ठ २५ के अनुसार आत्म-शोधन कर निम्न प्रकार से पूजा करे—

[१] ध्यान

या कुन्देन्दु-तुषार-हार-धवला, या शुभ्र-वस्त्रावृता,
या वीणा-वर-दण्ड-मण्डित-करा, या श्वेत-पद्मासना।
या ब्रह्माऽच्युत-शङ्कर-प्रभृतिर्देवैः सदा वन्दिता,
सा मां पातु सरस्वती निःशेष-जाड्यापहा॥

जो कुन्द-पुष्प और हिम-माला के समान उज्ज्वल-वर्णा हैं, जो उज्ज्वल वस्त्र-धारिणी हैं, जो सुन्दर वीणा-दण्ड से सुशोभित कर-कमलोंवाली हैं और जो सदा ब्रह्मा-विष्णु-महेश आदि देवताओं द्वारा वन्दिता हैं, वे जड़ता को निर्मूल करनेवाली भगवती सरस्वती मेरी रक्षा करें।

[२] आवाहन

श्रीभगवती सरस्वती का ध्यान करने के बाद, निम्न मन्त्र पढ़ते हुये श्रीसरस्वती की प्रतिमा के सम्मुख आवाहन-मुद्रा दिखाकर, उनका आवाहन करे। यथा—

आगच्छ देव-देवेशि ! तेजोमयि सरस्वति !
क्रियमाणां मया पूजां, गृहाण सुर-वन्दिते !
॥ श्रीसरस्वती-देवीं आवाहयामि ॥

अर्थात्—हे देवताओं की ईश्वरी ! तेज-मयी हे देवि सरस्वति ! हे देव-वन्दिते ! आइए, मेरे द्वारा की जानेवाली पूजा को स्वीकार करें ।

।। मैं भगवती श्रीसरस्वती का आवाहन करता हूँ ।।

[३] पुष्पाञ्जलि

आवाहन करने के बाद निम्न मन्त्र पढ़ कर उन्हें आसन के लिये पाँच पुष्प अञ्जलि में लेकर अपने सामने छोड़े—

नाना-रत्न-समायुक्तं, कार्त-स्वर-विभूषितम् ।
आसनं देव-देवेशि ! प्रीत्यर्थं प्रति-गृह्यताम् ।।
।। श्रीसरस्वती-देव्यै आसनार्थे पञ्च-पुष्पाणि समर्पयामि ।।

अर्थात्—हे देवताओं की ईश्वरि ! विविध प्रकार के रत्न से युक्त स्वर्ण-सज्जित आसन को प्रसन्नता हेतु ग्रहण करें ।

।। भगवती श्रीसरस्वती के आसन के लिये मैं पाँच पुष्प अर्पित करता हूँ ।।

[४] स्वागत

पुष्पांजलि-रूप आसन प्रदान करने के बाद हाथ जोड़कर 'श्रीसरस्वती-देवि ! स्वागतम्' अर्थात् 'हे देवि, सरस्वति ! आपका स्वागत है'—यह वाक्य कहे ।

[५] पाद्य

स्वागत कर निम्न-लिखित मन्त्र से पाद्य (पैर धोने हेतु जल) समर्पित करे—

पाद्यं गृहाण देवेशि, सर्व - क्षेम - समर्थे, भोः !
भक्त्या समर्पितं देवि, सरस्वति ! नमोऽस्तु ते ।।
।। श्रीसरस्वती-देव्यै पाद्यं नमः ।।

अर्थात्—सब प्रकार के कल्याण करने में समर्था हे देवेश्वरि ! पैर धोने का जल भक्ति-पूर्वक समर्पित है । उसे स्वीकार करें । हे देवि, सरस्वति ! आपको नमस्कार है ।

।। भगवती श्रीसरस्वती को पैर धोने के लिये यह जल है—उन्हें नमस्कार ।।

पाद्य-समर्पण के बाद उन्हें अर्घ्य (शिर के अभिषेक हेतु जल) समर्पित करे । यथा—

[६] अर्घ्य

नमस्ते देव-देवेशि ! नमस्ते वीणा-धारिणि !
नमस्ते श्रीसरस्वति, वाग्-देवि ! अर्घ्यं गृहाण ।
गन्ध - पुष्पाक्षतैर्युक्तं, फल - द्रव्य - समन्वितम् ।
गृहाण तोयमर्घ्यर्थं, परमेश्वरि, वत्सले !
।। श्रीसरस्वती-देव्यै अर्घ्यं स्वाहा ।।

अर्थात्––हे देवेश्वरि ! आपको नमस्कार । हे वीणा को धारण करनेवाली ! आपको नमस्कार । हे वाणी की देवि, श्रीसरस्वति ! आपको नमस्कार । शिर के अभिषेक के लिये यह जल (अर्घ्य) स्वीकार करें । हे कृपा-मयि परमेश्वरि ! चन्दन-पुष्प-अक्षत से युक्त, फल और द्रव्य के सहित यह जल शिर के अभिषेक के लिये स्वीकार करें ।

।। भगवती श्रीसरस्वती के लिये अर्घ्य समर्पित है ।।

[७] गन्ध (चन्दन) समर्पण

श्री-खण्ड-चन्दनं दिव्यं, गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सरस्वति ! चन्दनं प्रति-गृह्यताम् ।।
।। श्रीसरस्वती-देव्यै चन्दनं समर्पयामि ।।

अर्थात्––हे सरस्वति ! मनोहर और सुगन्धित चन्दन शरीर में लगाने हेतु ग्रहण करें ।

।। भगवती श्रीसरस्वती के लिये चन्दन समर्पित करता हूँ ।।

[८] पुष्प-समर्पण

यथा-प्राप्त-ऋतु-पुष्पैः, विल्व-तुलसी-दलैश्च ।
पूजयामि सरस्वति ! प्रसीद मे सुरेश्वर !
।। श्रीसरस्वती-देव्यै पुष्पं समर्पयामि ।।

अर्थात्––हे सरस्वति ! ऋतु के अनुसार प्राप्त पुष्पों और विल्व तथा तुलसी-दलों से मैं आपकी पूजा करता हूँ । हे देवेश्वरि ! मुझ पर आप प्रसन्न हों ।

।। भगवती श्रीसरस्वती के लिये पुष्प समर्पित करता हूँ ।।

[९] धूप-समर्पण

वनस्पति-रसोद्भूतो, गन्धाढ्यः सुमनोहरः ।
आघ्रेयः सर्व-देवानां, धूपोऽयं प्रति-गृह्यताम् ।।
।। श्रीसरस्वती-देव्यै धूपं समर्पयामि ।।

अर्थात्–वृक्षों के रस से बनी हुई, सुन्दर, मनोहर, सुगन्धित और सभी देवताओं के सूँघने के योग्य यह धूप आप ग्रहण करें ।

।। भगवती श्री सरस्वती के लिये मैं धूप समर्पित करता हूँ ।।

[१०] दीप-समर्पण

साज्यं वर्ति-संयुक्तं च, वह्निना योजितं मया,
दीपं गृहाण देवेशि ! त्रैलोक्य-तिमिरापहम् ।
भक्त्या दीपं प्रयच्छामि, वाग्-देव्यै परात्परायै ।
त्राहि मां निरयाद् घोराद्, दीपोऽयं प्रति-गृह्यताम् ।।
।। श्रीसरस्वती-देव्यै दीपं समर्पयामि ।।

अर्थात्––हे देवेश्वरि ! घी के सहित और बत्ती से मेरे द्वारा जलाया हुआ, तीनों लोकों के अँधेरे को दूर करनेवाला दीपक स्वीकार करें। मैं भक्ति-पूर्वक परात्परा वाग्-देवी को दीपक प्रदान करता हूँ। इस दीपक को स्वीकार करें और घोर नरक से मेरी रक्षा करें।

।। भगवती श्रीसरस्वती के लिये मैं दीपक समर्पित करता हूँ ।।

[११] नैवेद्य-समर्पण

शर्करा-खण्ड-खाद्यानि, दधि-क्षीर-घृतानि च।
आहारो भक्ष्य-भोज्यं च, नैवेद्यं प्रति-गृह्यताम्।

।। यथांशतः श्रीसरस्वती-देव्यै नैवेद्यं समर्पयामि—ॐ प्राणाय स्वाहा। ॐ अपानाय स्वाहा। ॐ समानाय स्वाहा। ॐ उदानाय स्वाहा। ॐ व्यानाय स्वाहा ।।

अर्थात्—शर्करा-खण्ड (बताशा आदि), खाद्य पदार्थ, दही, दूध और घी जैसी खाने की वस्तुओं से युक्त भोजन आप ग्रहण करें।

।। यथा-योग्य रूप भगवती श्रीसरस्वती को मैं नैवेद्य समर्पित करता हूँ—प्राण के लिये, अपान के लिये, समान के लिये, उदान के लिये और व्यान के लिये स्वीकार हो ।।

[१२] आचमन (जल) समर्पण

ततः पानीयं समर्पयामि इति उत्तरापोशनम्।
हस्त-प्रक्षालनं समर्पयामि। मुख - प्रक्षालनं।
करोद्वर्तनार्थे चन्दनं समर्पयामि।

अर्थात्—नैवेद्य के बाद मैं पीने और आचमन (उत्तरापोशन) के लिये, हाथ धोने के लिये, मुख धोने के लिये जल और हाथों में लगाने के लिये चन्दन समर्पित करता हूँ।

[१३] ताम्बूल-समर्पण

पूगी-फलं महा-दिव्यं, नाग-वल्ली-दलैर्युतम्।
कर्पूरैला-समायुक्तं, ताम्बूलं प्रति-गृह्यताम् ।।
।। श्रीसरस्वती-देव्यै मुख-वासार्थं पूगी - फल - युक्तं ताम्बूलं समर्पयामि ।।

अर्थात् पान के पत्तों से युक्त अत्यन्त सुन्दर सुपाड़ी, कपूर और इलायची से प्रस्तुत ताम्बूल आप स्वीकार करें।

।। भगवती श्रीसरस्वती के मुख को सुगन्धित करने के लिये सुपाड़ी से युक्त ताम्बूल मैं समर्पित करता हूँ ।।

[१४] दक्षिणा

हिरण्य-गर्भ-गर्भस्थं, हेम-वीजं विभावसोः।
अनन्त-पुण्य-फलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ।।
।। श्रीसरस्वती-देव्यै सुवर्ण-पुष्प-दक्षिणां समर्पयामि ।।

अर्थात्—असीम पुण्य प्रदान करनेवाले स्वर्ण-गर्भित चम्पक पुष्प से मुझे शान्ति प्रदान करिये ।

।। भगवती श्रीसरस्वती के लिये मैं स्वर्ण-पुष्प-रूपी दक्षिणा प्रदान करता हूँ ।।

[१५] प्रदक्षिणा

यानि कानि च पापानि, जन्मान्तर-कृतानि च । तानि तानि विनश्यन्ति, प्रदक्षिणं पदे पदे ।।
अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं प्रभो ! तस्मात् कारुण्य-भावेन, क्षमस्व परमेश्वर ।।
।। श्री सरस्वती-देव्यै प्रदक्षिणं समर्पयामि ।।

अर्थात्—पिछले जन्मों में जो भी पाप किये होते हैं, वे सब प्रदक्षिणा करते समय एक-एक पग पर क्रमशः नष्ट होते जाते हैं । हे देवि ! मेरे लिये कोई अन्य शरण देनेवाला नहीं है, तुम्हीं शरण-दाता हो । अतः हे परमेश्वरि ! दया-भाव से मुझे क्षमा करो ।

।। भगवती श्रीसरस्वती को मैं प्रदक्षिणा समर्पित करता हूँ ।।

[१६] वन्दना-सहित पुष्पाञ्जलि

कर-कृतं वा कायजं कर्मजं वा, श्रवण-नयनजं वा मानसं वाऽपराधम् ।
विदितमविदितं वा, सर्वमेतत् क्षमस्व, जय जय करुणाब्धे, श्रीसरस्वति ! त्राहि ।
।। श्रीसरस्वती-देव्यै मन्त्र-पुष्पं समर्पयामि ।।

अर्थात्—हे दया-सागरे, श्रीसरस्वति ! हाथों-पैरों द्वारा किये हुये या शरीर या कर्म से उत्पन्न, कानों-आँखों से उत्पन्न या मन के जो भी ज्ञात या अज्ञात मेरे अपराध हों, उन सबको आप क्षमा करें । आपकी जय हो, जय हो । मेरी रक्षा करें ।

।। भगवती श्रीसरस्वती के लिये मैं मन्त्र-पुष्पांजलि समर्पित करता हूँ ।।

[१७] साष्टाङ्ग-प्रणाम

निम्न मन्त्र पढ़कर साष्टाङ्ग प्रणाम कर नमस्कार करें—

नमः वेद-वेदान्तायै, सरस्वत्यै नमो नमः । साष्टाङ्गोऽयं सुप्रणामः, प्रयत्नेन मया कृतः ।।
नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्र-मूर्तये सहस्र-पादाक्षि-शिरोरु-बाहवे ।

अर्थात्—वेद-वेदान्त-स्वरूपिणी कोन मस्कार, सरस्वती देवी को बारम्बार नमस्कार । यह साष्टाङ्ग प्रमाण मैंने प्रयत्न-पूर्वक किया है—अनन्ता भगवती के लिये, सहस्रों स्वरूपवाली भगवती के लिये, सहस्रों पैर-आँख-शिर-ऊरु और बाहुवाली भगवती के लिये नमस्कार है ।

[१८] क्षमा-प्रार्थना

आवाहनं न जानामि, न जानामि विसर्जनम् । पूजा-कर्म न जानामि, क्षमस्व परमेश्वरि ।।
मन्त्र-हीनं क्रिया-हीनं, भक्ति-हीनं सुरेश्वरि ! मया यत्-पूजितं देवि ! परिपूर्णं तदस्तु मे ।।
अनेन यथा-मिलितोपचार-द्रव्यैः कृत - पूजनेन श्रीसरस्वती-देवीः प्रीयताम् ।
।। श्री सरस्वती-देव्यै अर्पणमस्तु ।।

साधनोपयोगी श्रेष्ठ पुस्तकें

पूजा-रहस्य

हिन्दुओं की पूजा का विवरण

मूल्य १५-०० रु०

सचित्र मुद्राएँ एवम् उपचार

हिन्दुओं की पूजा में प्रयुक्त होनेवाली मुद्राओं एवं पूजोपचार (आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, गन्ध, अक्षत, पुष्प, धूप, नैवेद्य, ताम्बूल, प्रदक्षिणा) का प्रामाणिक वर्णन ।

मूल्य १५-०० रु०

सविधि श्री कुण्डलिनी साधना

षट्-चक्रों एवं कुण्डलिनी-योग का विवेचन

मूल्य १५-०० रु०

सविधि दश-महाविद्या स्तोत्र-संग्रह

भ० काली, भ० तारा, श्री श्रीविद्या, श्रीभुवनेश्वरी आदि महा-विद्याओं के स्तोत्रों के संग्रह

प्राप्ति-स्थान : कल्याण मन्दिर प्रकाशन, अलोपीबाग मार्ग, प्रयाग—२११००६

॥ नमः वेद-वेदान्तायै, सरस्वत्यै नमो नमः ॥

मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक : ऋतशील शर्मा, एम० ए०